महर्षि दयानन्द सरस्वती का स्त्री शिक्षा विषयक विचार एवं योगदान

डॉ. गुड्डी कुमारी*

आर्य समाज ने स्त्री शिक्षा के प्रसार के क्षेत्र में विलक्षण कार्य किया है। इसे आर्य समाज ने पिछली शताब्दी के अन्त में प्रारम्भ किया और शीघ्र ही विभिन्न आर्य समाजों द्वारा कन्यानों की शिक्षा के लिए सैकड़ों की संख्या में पाठशालाएँ, विद्यालय, महा विद्यालय और कन्या गुरुकुल स्थापित किये गये। इनमें लाखों कन्याओं ने शिक्षा ग्रहण की है। स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में पिछले सौ वर्षों में आर्यसमाज द्वारा किया गया कार्य अतीव महत्त्वपूर्ण और अद्वितीय है। खेद है कि स्त्री शिक्षा विषयक आर्य समाज के इस महत्त्वपूर्ण कार्य का समुचित मूल्यांकन नहीं किया गया है। क्योंकि उस समय स्त्री शिक्षा को महत्वपूर्ण एवं देश हित के विकास के लिए आवश्यक नहीं समझा जाता था।

इसकी जानकारी वर्तमान समय के और 19 वीं शताब्दी के प्रारम्भ के समय में स्त्री शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण के तुलनात्मक विवेचन से स्पष्ट हो जायगा।

आजकल माता–पिता अपनी कन्याओं को अच्छी–से–अच्छी तथा ऊँची–से–ऊँची शिक्षा देने की आकांक्षा रखते हैं और उसे यथासम्भव पूरा करने का प्रयास करते हैं। कन्याएँ स्वयं भी पड़ने के लिए उत्सुक हैं। उन्हें यह विश्वास है कि शिक्षा उनके लिए उन्नति के सब द्वार खोल देगी, साथ ही उनके विवाह की समस्या का समाधान करने में भी उन्हें बहुमूल्य सहायता देगी और आवश्यकता पड़ने पर वे इस शिक्षा से आजीविका का उपार्जन करके स्वावलम्बी बन सकेंगी और उच्चतम सरकारी पद पा सकेंगी। इस समय सरकार की ओर से स्त्री शिक्षा के प्रसार को बहुत बढ़ावा दिया जा रहा है। इस दृष्टि से केंद्रीय और राज्य सरकार ने कई कदम भी उठाये हैं। उनमें प्रमुख हैं – महिलाओं की शिक्षा की देखभाल के लिए राज्य शिक्षा निदेशालयों में अलग शाखा की स्थापना, महिला अध्यापकों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में क्वार्टरों तथा लड़कियों के लिए होस्टलों का निर्माण और स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत गैर–सरकारी संस्थानों की सहायता। राष्ट्रीय दृष्टिकोण से इस पर विचार करने के लिए केंद्र में तथा राज्य सरकारों में महिला शिक्षा परिषदें हैं। सरकार की ओर से तथा सार्वजनिक संगठनों द्वारा स्थान–स्थान पर लड़कियों के स्कूल खुले हुए हैं और इनमें पढने पाली कन्याओं की संख्या लगातार बढ़ रही है।

***पीएच.डी. नेट, रिसोर्स टीचर, बी.आर.ए.बी. यूनिवर्सिटी, मुजफ्फरपुर, बिहार**

किन्तु सौ वर्ष पहले जब आर्य समाज में स्त्री शिक्षा का कार्य आरंभ किया था तो स्थिति इससे सर्वथा भिन्न थी। उन दिनों सामान्य जनता में यह विश्वास प्रगाढ़ था कि स्त्रियों को शिक्षा नहीं दी जानी चाहिए। इससे उनका चरित्र भ्रष्ट हो जाता है, वे विधवा हो जाती है। इस अंधविश्वास और मूर्खता के कारण उस समय कोई भी माता पिता अपनी कन्याओं को शिक्षा देने के लिए तैयार नहीं होता था। यदि कोई ऐसी शिक्षा देने का प्रयास करता था तो उसका न केवल उग्र विरोध किया जाता था, बल्कि उसे गालियाँ दी जाती थीं, उस पर व्यंग्य कसे जाते थे, उसे जाति सें भी बहिष्कृत करने की धमकी दी जाती थी।

इसका सर्वोत्तम उदाहरण आर्य समाज की पहली शिक्षण संस्था कन्या महाविद्यालय, जालन्धर को स्थापित करने वाले लाला देवराज हैं। जब उन्होने जालन्धर में इसे स्थापित करने का प्रयास किया, तो उन्हें तीन बार इसमें भारी विफलता मिली। कोई भी व्यक्ति उस समय उनके विद्यालय में अपनी लड़कियों को भेजने के लिए तैयार नहीं था। तीन बार कन्या पाठशाला चलाने के प्रयास विफल होने के बाद चौथी वार लोगों के घरों पर जाकर माता–पिता को बार–बार प्रेरणा करने पर उन्हें कुछ लड़कियाँ मिली। वह जहाँ कहीं भी अपने विद्यालय में लड़कियों के प्रवेश के लिए माता–पिता के पास जाले थे, विरोधी लोग उन पर न केवल गालियों की, अपितृ ईंट, पत्थर तक को बौछार करते थे। उन दिनों कन्याओं को पढ़ाने के लिए अध्यापिका भी नहीं मिलती थी।

उस समय कन्याओं की शिक्षा के लिए केवल ईसाई मिशनरियों द्वारा संचालित कुछ मिशन स्कूल थे जो भारतीयों को ईसाई बनाने की दृष्टि से खोले गये थे। इस क्षेत्र में आर्यसमाज ने पहली बार संगठित रूप से प्रयास प्रारम्भ किये, जो अनेक कठिनाइयों के बावजूद लाला देवराज जैसे व्यक्तियों के अध्यवसाय, धुन, लगन और सतत् प्रयत्न से सफल हुआ। आर्य समाज ने उत्तर भारत में सर्वत्र स्त्री शिक्षण–संस्थाओं का जाल बिछा दिया। ऐसा कार्य किसी अन्य संगठन ने नहीं किया। इस दृष्टि से आर्यसमाज का यह कार्य अद्वितीय कहा जा सकता है।

आर्य समाज ने यह कार्य कई कारणों से प्रेरित होकर किया। आर्य समाज द्वारा स्त्री शिक्षा पर बल देने के अनेक कारण थे। पहला कारण स्त्री शिक्षा के माध्यम से समाज का सुधार करने की इच्छा थी। उस समय हमारे समाज में बाल विवाह, बालिका वधू, विधवा विवाह का निषेध, परदा, दहेज आदि विभिन्न प्रकार की कुरीतियों प्रचलित थीं इनके कारण समाज में स्त्रियों की स्थिति बहुत गिरी हुई थी। इसमें क्रांतिकारी परिवर्तन तभी हो सकता था जब स्त्रियाँ सुशिक्षित हों। दूसरा कारण वैदिक युग को वापस लाने की आकांक्षा थी। महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में बार–बार इस बात पर बल दिया था कि वैदिक युग भारतवर्ष का आदर्श स्वर्ण

युग था। वेद विद्या के विस्मरण से आर्यवर्त की अधोगति हुई है। उसके पुनरुत्थान का एकमात्र उपाय वैदिक युग का पुनरावर्तन है। समाज में स्त्रियों की स्थिति वही होनी चाहिए जो वैदिक युग में थी। उन्हें समाज में वैदिक युग में जो ऊँचा दरजा और समानाधिकार प्राप्त थे, वही इस युग में भी उन्हें स्त्री शिक्षा के माध्यम से दिये जाने चाहिये। प्राचीन भारत में स्त्रियों शिक्षित होती थी और समाज में उनकी स्थिति पुरुषों के समान थी।[1]

किन्तु वैदिक युग के बाद नारी की यह उच्च स्थिति देर तक नहीं रह सकी। उसे शनैः–शनैः यज्ञ के अधिकार से वंचित किया गया और उसके ये कार्य उसके स्थान पर पुरोहितों और ब्राह्मणों द्वारा होने लगे। कुछ समय बाद स्त्रियों को यज्ञाधिकार से वंचित करके उन्हें शूद्रों के समकक्ष बना दिया गया। स्त्रियों को यज्ञाधिकार से वंचित करने के सम्भवतः चार प्रधान कारण थे।

पहला कारण कर्मकांड की जटिलता में वृद्धि थी। जो यज्ञ से पहले पति–पत्नी द्वारा सादे रूप से किये जाते थे, अब उनको इतना जटिल बना दिया गया कि उनके लिए अनेक पुरोहितों की आवश्यकता पड़ने लगी।

दूसरा कारण अनार्य स्त्रियों के साथ अंतरजातीय विवाह थे।

तीसरा कारण मासिक धर्म के कारण स्त्रियों को अशुचि तथा अमेध्य ठहराया जाना था।

चौथा कारण स्त्रियों के उपनयन की प्रथा का अप्रचलित होना था। नियत अवधि तक उपनयन संस्कार न होने से गृह्यसूत्रों के समय से नारी को शूद्र माना जाने लगा।

पाँचवां कारण भारत में वैराग्यप्रधान निवृत्तिपरक प्रवृत्तियों का प्रबल होना था। वैराग्यवादी विचारकों के अनुसार सांसारिक मोह और बन्धन का प्रधान कारण नारी में आसक्ति है। अतः उन्होंने व्यक्ति को संसार से विरक्त बनाने की दृष्टि से नारी की निन्दा में कोई कसर नहीं छोड़ी।[2] इन सब कारणों से नारी की स्थिति हिन्दू समाज में उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ में अधःपतन की चरम सीमा पर पहुँच गयी। वह घर में रानी के उच्च धरातल से गिरकर नौकरानी के स्तर तक पहुँच गई थी। आर्यसमाज उसे वैदक युग की उच्चतम स्थिति तक पहुंचाना चाहता थाय विश्ववारा, अपाला, घोषा जैसी ऋषिकायें, गार्गी जैसी विदुषियाँ पैदा करना चाहता था। इसका प्रधान साधन स्त्री शिक्षा थी।

(क) स्त्रियों के वेदाध्ययन का समर्थन – महर्षि दयानन्द सरस्वती के कार्यक्षेत्र में अवत्तीर्ण होने के समय तक भारत में यह सिद्धांत सर्वमान्य था कि स्त्रियाँ शिक्षा पाने का अधिकार नहीं रखती हैं। उन्हें न केवल वेदों तथा संस्कृत भाषा की, अपितु लोकभाषा की भी कोई शिक्षा नहीं दी जानी चाहिये। समूचे

मध्य काल में यह व्यवस्था सर्वमान्य थी। वर्तमान समय में हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के वेद–विभाग में इस शताब्दी के मध्य तक नारियों को वेदाध्ययन का अधिकार नहीं था। मीमांसा न्यायप्रकाश के एक उद्धरण के आधार पर कन्याओं के वेदाध्ययन के निषेध को श्रुति सम्मत ठहराया जाता था।[3] इसका यह आशय था कि स्त्री तथा शूद्र को वेद नहीं पढ़ाना चाहिये (स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्)। इस विषय में भागवत पुराण की व्यवस्था का पहले उल्लेख किया जा चुका है। महर्षि स्त्रियों को वेद की शिक्षा देने के प्रबल समर्थक थे। वह वेद की शिक्षा सम्पूर्ण मानव–जाति के लिए समझते थे और स्त्रियों को वेद अधिकार से वंचित करने वाले वचनों को सर्वथा कपोलकल्पित मानते थे। उन्होंने स्त्री शिक्षा का समर्थन करते हुए लिखा है, कि ''सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को वेद पढ़ने का अधिकार है। तुम कुओं में पड़ो और यह श्रुति (स्त्रीशूद्रौ नाचीयाताम्) तुम्हारी कपोलकल्पना से हुई है। किसी प्रामाणिक ग्रंथ की नहीं।''[4]

महर्षि ने स्त्री शिक्षा का समर्थन तीन वैदिक प्रमाणों के आधार पर किया है।

पहला प्रमाण यजुर्वेद का मंत्र है। उसमें भगवान ने यह कहा है, कि मैं सब मनुष्यों के लिए वेदों की कल्याणकारी वाणी का उपदेश करता हूँ, वैसे ही तुम भी किया करो।'' यहाँ वेद की वाणी मनुष्य मात्र के लिए देने की बात कही गयी है। उसमें स्त्री–पुरुष का कोई भेद नहीं किया गया है। इस पर महर्षि की यह टिप्पणी उल्लेखनीय कि ''सब मनुष्य वेदों को पढ़–पढ़ाकर और सुन–सुना के विज्ञान को बढ़घने की, अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी आदतों का त्याग करके दुःखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों। कहिये, अब तुम्हारी बात माने वा परमेश्वर की ? परमेश्वर की बास अवश्य माननीय है। इतने पर भी जो कोई उसको न मानेगा, वह नास्तिक कहावेगा।''

वेदवाणी को सब नर–नारियों के लिए समान रूप से पढ़ाने की व्यवस्था का समर्थन प्रबल तर्क से करते हुए महर्षि ने लिखा है, ''क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता है ? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों को पढ़ने–सुनने का शूद्रों के लिए निषेध और द्विजों के लिए विधि करे ? जो परमेश्वर का अभिप्राय शुद्र आदि के पढ़ने सुनाने का ना होता तो इनके शरीर में वाक् और स्रोत्र इंद्रियाँ क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी जल वायु चंद्र सूर्य अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किए हैं, और जहां कहीं भी निषेध किया है, उसका अभिप्राय यह है कि जिसको पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे, वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहलाता है। उसका पढ़ना–पढ़ाना व्यर्थ है। और जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो, वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है।''

स्त्री शिक्षा का दूसरा प्रमाण अथर्ववेद का एक मन्त्र है – ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्। इसका अर्थ है कि कन्या ब्रह्मचर्य द्वारा युवा पति को प्राप्त करती है। महर्षि ने इस मन्त्र का अभिप्राय विशद करते हुए कहा है ''जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और शिक्षा प्राप्त कर अपने अनुकूल स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं, वैसे ही कन्या ब्रह्मचर्य सेवन से अर्थात् वेदादि शास्त्रों को पढ़ कर पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त कर युवती होने पर पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश विद्वान, पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष को प्राप्त करे। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियों के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदादि शास्त्रों को विद्या ग्रहण अवश्य करना चाहिये''।[5]

तीसरा प्रमाण श्रौतसूत्रों के कुछ वचनों का है। इनमें पत्नी द्वारा वेदमन्त्र पढ़ने का विधान किया गया है। आश्वलायन श्रौतसूत्र (१–११) में कहा गया है, कि पत्नी को वेद देकर उससे बंचवाये।[6] शांखायन श्रौतसूत्र के अनुसार पत्नी वेद को बाँचती है।[7] महर्षि का कहना है कि यदि पत्नी वेदादि शास्त्रों का अध्ययन नहीं करेगी तो यज्ञ में स्वर सहित मन्त्रों का वाचन तथा उच्चारण कैसे कर सकेगी?

वैदिक प्रमाणों के अतिरिक्त महर्षि ने ऐतिहासिक उदाहरणों से भी वैदिक काल में स्त्रियों को शिक्षा देने का समर्थन किया है। इस विषय में उन्होंने दो उदाहरण दिये हैं। पहला उदाहरण शतपथ ब्राह्मण और बृहदारण्यक उपनिषद् में वर्णित गार्गी का है इसके विषय में कहा जाता है कि राजा जनक की सभा में एक बार सुप्रसिद्ध विद्वान् याज्ञवल्क्य को गार्गी ने शास्त्रार्थ में परास्त किया था। इस उदाहरण से स्पष्ट है कि गार्गी वैदिक विद्या में पारंगत थी और उस समय के सुप्रसिद्ध विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ करने में समर्थ थी।

दूसरा उदाहरण महर्षि ने दशरथ की रानी कैकेयी का दिया है। वह अपने पति के साथ युद्ध में गयी और वहां देवासुर संग्राम में पति की प्राणरक्षा करके उसने पति से दो वर प्राप्त किये। वाल्मीकि रामायण के इस प्रमाण के आधार पर महर्षि ने यह परिणाम निकाला है कि प्राचीन काल में स्त्रियाँ न केवल ब्रह्मविद्या की शिक्षा ग्रहण करती थीं, अपितु आर्यावर्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्ध विद्या की भी शिक्षा ग्रहण करती थीं। उसमें प्रवीण होकर पति के साथ युद्ध में भाग लेती थीं, क्योंकि जो न जानती होती तो कैकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्योंकर जा सकती? और युद्ध कर सकतीं।[8]

(ख) स्त्रियों को शिक्षा के पाठ्य विषय – महर्षि ने स्त्रियों को दी जाने वाली शिक्षा और पढ़ाये जाने वाले विषयों का कुछ विस्तार से वर्णन किया है। वे

स्त्रियों को उनके वर्ण तथा आवश्यकता के अनुसार सब प्रकार की उपयोगी शिक्षा देना चाहते थे, जिससे वे सुगृहिणी बनें, घर के सब कार्यों को भली–भांति कर सकें। पति को प्रसन्न रखें और बच्चों का लालन–पालन और शिक्षा समुचित रूप से करें। महर्षि के मतानुसार स्त्रियों को दो प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए– सामान्य तथा विशेष।

सामान्य शिक्षा का अभिप्राय उन्हें पुरुषों के समान दी जाने वाली व्याकरण आदि की शिक्षा थी, जो उन्हें भाषा का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ बनाती थी। विशेष शिक्षा उन्हें गृहकार्यों को दक्षता पूर्वक सम्पन्न करना, सन्तान की उत्पत्ति पर उनका पालन–पोषण वर्धन सिखाती थी। घर के कार्यों को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिए उन्हें चिकित्सा–शास्त्र और वैद्यक का भी ज्ञान होना चाहिये ताकि वे घर में सब व्यक्तियों का स्वास्थ्य उत्तम बनाये रखने के लिए आवश्यक व्यंजन, भोजन–पान आदि की पूरी व्यवस्था कर सक, जिससे घर में कभी कोई रोग न हो और सब लोग सदा प्रसन्न रहें। शिल्पविद्या का अभिप्राय घरेलू कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार की कारीगरी का ज्ञान है। महर्षि इसमें घर के बनवाने तथा वस्त्र आभूषण की निर्माण कला को सम्मिलित करते हैं। गणित का ज्ञान वे घर के हिसाब–किताब को ठीक रखने के लिए आवश्यक मानते हैं।[9]

इसके साथ ही वह स्त्रियों को वेदादि शास्त्रों की शिक्षा देना भी जरूरी समझते हैं, ताकि वे ईश्वर और धर्म के स्वरूप को जान सकें और अधर्म से बच सके। स्त्रियां न केवल सुगृहिणी हों, अपितु वे सच्चे श्रर्थों में पति की सहधर्मिणी हों। उनका यह विश्वास था कि यदि ऐसा नहीं होगा तो घर में कोहराम और झगड़ा मचा रहेगा। इसलिए घर को सुख और शान्ति का धाम बनाये रखने के लिए वे स्त्रियों की शिक्षा को अति आवश्यक समझते थे।

उपयुक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि महर्षि की स्त्री शिक्षा की योजना की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वह नारियों के आत्मा, मन, बुद्धि और शरीर का सर्वांगीण विकास करना चाहते थे। इसमें गृहिणी के रूप में उसके द्वारा किये जाने वाले कार्यों के लिए आवश्यक विषयों के प्रशिक्षण का निर्देश किया गया था।

पिछली शताब्दी में महर्षि के अतिरिक्त अन्य अनेक सुधारकों और विचारकों ने स्त्री शिक्षा पर बल दिया था। उनके हित एवं शिक्षा के लिए प्रयत्न किया था। किन्तु इनमें किसी का दृष्टिकोण महर्षि दयानन्द के दृष्टिकोण जितना व्यापक नहीं था । सबने केवल कन्याओं को साक्षर बनाने के साथ–साथ उन्हें वेद वेदांग पढ़ाने और गृहोपयोगी कलाओं के सिखाने पर बल देते थे।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉक्टर सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्य समाज का इतिहास, पृष्ठ 216–218
2. हरिदत्त वेदालंकार, हिंदी परिवार मीमांसा, पृष्ठ 109–17
3. स्वामी वेदानंद का संस्करण, सत्यार्थ प्रकाश, तीसरा समुल्लास, पृष्ठ 69
4. वही पुस्तक, पृष्ठ 70
5. वही पुस्तक, पृष्ठ 70–71
6. अश्वलान स्रोत सूत्र (1–11), वेदों पत्न्यै प्रदाय वाचयेत
7. शांखायन स्रोत सूत्र 15 15 इति वेदं पत्नी वाचयति
8. स्वामी वेदानंद का संस्करण, सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास, पृष्ठ– 71
9. वही, तृतीय समुल्लास
10. सत्यकेतु विद्यालंकार, प्राचीन भारत का सामाजिक सांस्तिक इतिहास
11. डॉ राधा कृष्ण चौधरी, प्राचीन भारत का इतिहास

स्वतंत्रोत्तर चंपारण में बाल विवाह की स्थिति

डॉ. पूर्णिमा कुमारी*

बाल–विवाह, बाल–अधिकारों का हननकर्ता है यह अक्सर लड़का एवं लड़की दोनों के साथ होता है।[1] अभी भी भारत में 21 वर्ष का लड़का एवं 18 वर्ष की लड़की की शादी बड़े पैमाने पर हो रहे हैं।[2] भारत में 23,000000 लड़कियां इस सच्चाई का सामना करती है। चूकि प्रत्येक वर्ष देश 8 प्रतिशत की दर से उन्नति कर रहा है जबकि इसकी तुलना में प्रति वर्ष बाल–विवाह कम से कम एक प्रतिशत अंक के साथ घट रही है।[3] बाल विवाह प्रसार में लैंगिक असमानता और अन्याय की झलक दिखई देती है, बाल–विवाह का प्रसार वंचित समूहों, गरीब परिवारों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक है।[4] बहुत से कारक इस घटना को घटित होने में योगदान देते हैः लिंग मानक और अपेक्षाएं, आस पास की पारंपारिक प्रथाएं लड़कियों की सुरक्षा की चिंता एवं पारिवारिक सम्मान, गरीबी, सीमित शिक्षा एवं आजीविका के अवसर और कमजोर कनूनी कार्रवाई। विशेष रुप से पितृसत्तात्मक मूल्य बाल–विवाह होने में मुख्य भूमिका अदा करता है। लड़कियां पिता का घर छोड़कर पति के घर जाने वाली सम्पति के रुप में देखी जाती हैध्मानी जाती है। उनके परिवार द्वारा गृहणियों के रुप में हीं कल्पना की जाती है जो उनका भविष्य है।[5]

भविष्य की पीढ़ियां रोजगार के अवसर प्राप्त करने के लिए निम्न कुशलता के साथ विद्यालय से बाहर कर दिए जाते हैं परिणामस्वरुप गरीबी चक्र बना रहता है।[6] बाल–विवाह का प्रभाव लड़का एवं लड़की दोनों पर पड़ता है किन्तु लड़कियों के साथ यह घटना अति तीव्रता के साथ घटीत होती है एवं इसका परिणाम लड़कियों के पूर्ण विकास पर पड़ता।[7] लड़कियों का विवाह के नाम पर विद्यालय छुड़ा दिया जाता है और समाज में इनकी भूमिका एक पत्नी तक ही सीमित हो जाती है।[8] भारत में बाल विवाहों के मामले दो दशक में कम जरुर हुए हैं लेकिन इस कमी की रतार इतनी धीमी है कि इस प्रथा को खत्म होने में अभी 50 वर्ष और लग जाएंगे। भारत में यूनिसेफ की बाल सुरक्षा विशेषज्ञ डोरा ग्युस्टी ने बताया ''पिछले दो दशक से बाल विवाह की संख्या में हर साल एक फीसदी की कमी आई है और यही सिलसिला जारी रहा तो इसे पूरी तरह खत्म होने में कम से कम 50 साल और लगेंगे।'' जुलाई में संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट में कहा गया कि है कि बाल विवाह के प्रचलन के मामलों में भारत का स्थन छठा है जहां हर तीन बाल वधुओं में से एक देश में रहती है। भारत में बाल विवाह पर रोक के लिए यूनिसेफ

***एम.ए., पीएच.डी., बी.आर.ए.बी. यूनिवर्सिटी, मुजफ्फरपुर, बिहार**